# कोविड-19 के दौर में संघवाद

संघवाद विरोधाभासों से भरा एक विचित्र तत्व है। भारतीय संविधान में कहीं भी इसका उल्लेख नहीं है ( प्रस्तावना में भी नहीं) । यह संविधान के बुनियादी ढांचे का भी कभी हिस्सा नहीं रहा , और न ही किसी संशोधन का । 1977 में धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद को संविधान की प्रस्तावना में शामिल किया गया था। तब भी संघवाद को शामिल नहीं किया गया।

भारत के विभाजन की हिंसा और भयावह माहौल के बीच , नवजात गणतंत्र की विलक्षण प्रवृत्ति के बारे में कहते हुए इसे "अर्धसंघीय" ही कहा गया था। फिर भी सात दशकों के लंबे दौर में यह संघीय हो चला। परन्तु इस महामारी के चक्र ने फिर से हमारे तंत्र को एकात्मक बना दिया है। इस दौर में जिस प्रकार का केन्द्रीय शासन चलाया जा रहा है , उसकी सख्त जांच की जानी चाहिए। लॉकडाउन में लागू किये गये आपदा प्रबंधन अधिनियम की धाराएं 35, 62, 65 केन्द्रीय अधिकारियों को कुछ भी करने , और किसी भी इकाई को निर्देशित करने का अधिकार देती हैं। इसमें केन्द्र के दो निर्देशों पर उंगली उठाया जाना जरूरी है। पहला , धारा 10(2)(i) के अधीन अनिवार्य रूप से वेतन दिये जाने का आदेश और दूसरा , आरोग्य सेतू एप की अनिवार्यता।

हमारा संघवाद अमेरिका के विपरीत है। वहां कई देशों ने सीमित केन्द्र सरकार की शक्ति के साथ एक नया राष्ट्र बनाने के लिए संप्रभुता का हवाला दिया , वहीं भारतीय गणराज्य में यह मामला ऊपर से नीचे की ओर गया। हमारे संविधान निर्माताओं ने सूची 1 में केन्द्र के लिए अधिकतम शक्तियां रखीं। अनुच्छेद 356 में केन्द्र को राज्य अधिग्रहण , और 355 के व्दारा राज्यों में केन्द्रीय बलों को भेजने की शक्ति प्रदान की गई है। इसके अलावा सूची 1 में केवल एक

अवशिष्ट प्रविष्टि डालकर केन्द्र को अनेक अनिर्दिष्ट विधायी शक्तियों का स्वामी बना दिया गया है। इतना ही नहीं , एक लंबी समवर्ती सूची 3 बनाई गई, जहाँ केन्द्रीय कानून, राज्य कानून को रद्द कर देता है। अनुच्छेद 249 ,250 और 253 के माध्यम से ( राष्ट्रीय हित के लिए , आपात स्थिति के दौरान और संधियों को लागू करने के लिए ) राज्य के विशेष विषयों पर भी कानून बनाने के लिए केन्द्र को सशक्त बनाया गया।

अनजाने और आकस्मिक संघवाद को मूल रूप से छह पहलुओं में बांटा जा सकता है। (1) भाषाई संघवाद , जो भाषाई आधार पर राज्य का निर्माण करता है , और तीन भाषाओं के फार्मूले की स्थिरता को बनाए रखता है। (2) राष्ट्रपति शासन और फ्लोर टेस्ट की शीघ्र प्रभावी और दंडात्मक न्यायिक समीक्षा किया जाना। महाराष्ट्र , उत्तराखंड , कर्नाटक आदि राज्यों में ऐसा किया गया। (3) संविधान के 72वें और 73वें संशोधन के द्वारा तीन स्तरीय पंचायती राज प्रशासन की शुरुआत। इसमें वित्तीय और प्रशासनिक आधार दिए गए। इसे पंचायती संघवाद कहा जा सकता है। (4) 1991 के बाद से उदारीकरण के व्दारा आर्थिक संघवाद लाया गया। इससे मुख्यमंत्रियों को केबिनेट मंत्री से तीन गुना अधिक शक्तियां दे दी गईं। (5) राजकोषीय संघवाद के परिणामस्वरूप राज्यों को केन्द्र सरकार की लगभग 43% प्राप्तियों पर अधिकार हो गया। एक दशक पूर्व यह 31% था। (6) अंततः गठबंधन शासन और क्षेत्रीय राजनीतिक दल , राजनीतिक संघवाद के समर्थक हैं।

संघवाद के लिए एक बड़ा खतरा , राज्यापालों की पक्षपातपूर्ण राजनीतिक नियुक्तियां हैं। निर्वाचित मुख्य मंत्री और नियुक्त राज्यपाल के बीच विभाजित संप्रभुता की इस अराजकता के प्रति अंबेडकर और सरकारिया आयोग दोनों ने ही चिंता जताई थी।

राजनीतिक लोगों पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ने वाला। अच्छा तो यही है कि विभिन्न क्षेत्रों की प्रसिध्द हस्तियों को राज्यपाल नियुक्त किया जाना चाहिए। या फिर इस पद को हटाए जाने पर विचार होना चाहिए।

महामारी के वर्तमान दौर में प्रारंभिक लॉकडाउन का निर्णय एकतरफा था , परन्तु बाद में राज्यों और मुख्यमंत्रियों को सलाहकार के रूप में तैयार किया गया। इस दौरान कोई संघीय निर्णय लेने के लिए संस्थागत तंत्र के रूप में किसी अंतरराज्यीय परिषद् का संचालन नहीं किया गया है।

अगर हम विविधता से भरे इस भारत देश में संघवाद के स्वरूप को दरकिनार करते हैं , तो इतिहास हमारे साथ कठोर न्याय करेगा।

**'द टाइम्स ऑफ इंडिया' में प्रकाशित अभिषेक मनु सिंघवी के लेख पर आधारित 26 जून , 2020**